INDIAN STREAMS RESEARCH JOURNAL
ISSN NO : 2230-7850
IMPACT FACTOR : 5.1651 (UIF)
VOLUME - 15 | ISSUE - 5 | JUNE – 2025

"हिन्दी नाट्य साहित्य में मोहन राकेश के नाटक 'लहरों के राजहंस' का अध्ययन"

रामलाल प्रजापति
शोधार्थी, हिन्दी विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

डॉ. राजेन्द्र कुमार द्विवेदी
प्राध्यापक, हिन्दी विभाग
शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)

सारांश –

'लहरों के राजहंस' एक ऐतिहासिक नाटक होते हुए भी पूर्णतः ऐतिहासिक नहीं है। इसमें गौतम बुद्ध, यशोधरा, नंद और गोतम जैसे पात्रों के माध्यम से मोहन राकेश ने एक अत्यंत जटिल मानसिक, दार्शनिक और भावनात्मक द्वन्द्व को मंचित किया है। यह नाटक उस क्षण को केंद्र में रखता है जब बुद्ध गृहत्याग के पश्चात वर्षों बाद कपिलवस्तु लौटते हैं और यशोधरा से आमना–सामना होता है। परंतु यह आमना–सामना किसी प्रत्यक्ष संवाद या टकराव में नहीं होता, बल्कि मौन, संवेदना और अधूरे संवादों के माध्यम से पात्रों की मानसिक स्थिति को प्रकट करता है।

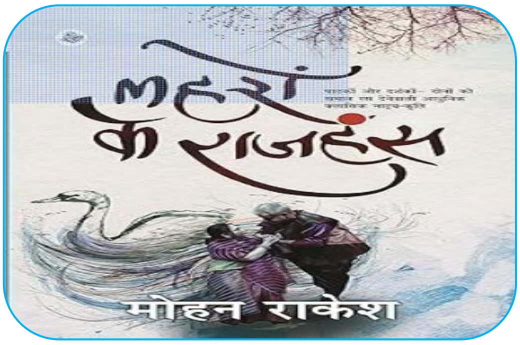

मुख्य शब्द – लहरों के राजहंस, ऐतिहासिक नाटक, मानसिक, दार्शनिक एवं भावनात्मक द्वन्द्व।

प्रस्तावना –

हिन्दी नाट्य साहित्य में मोहन राकेश का योगदान आधुनिक नाटक की बुनियाद को सुदृढ़ करने वाला रहा है। उनके नाटकों में यथार्थवादी दृष्टिकोण, मनोवैज्ञानिक गहराई और पात्रों के भीतर के द्वन्द्व को जिस सूक्ष्मता और कलात्मकता से प्रस्तुत किया गया है, वह हिन्दी नाट्य परंपरा में एक नई प्रवृत्ति का सूत्रपात करता है। इसी क्रम में लिखा गया नाटक 'लहरों के राजहंस' (1963), मोहन राकेश की सर्वाधिक विचारोत्तेजक और दार्शनिक कृतियों में से एक है। इस प्रकार 'लहरों के राजहंस' एक गहरे भावबोध, आत्ममंथन और संबंधों के टकराव का दार्शनिक नाटक है, जो न केवल बुद्ध के त्याग की पुर्नव्याख्या करता है, बल्कि यशोधरा के माध्यम से स्त्री की नई चेतना को स्वर प्रदान करता है। यह नाटक मोहन राकेश के रचनात्मक कौशल और मानवीय अंतर्दृष्टि का उत्कृष्ट उदाहरण है।

मोहन राकेश द्वारा रचित नाटक 'लहरों के राजहंस' की रचना का आधार संस्कृत कवि अश्वघोष का महाकाव्य 'सौन्द्रनन्द' है। इस महाकाव्य में वर्णित नन्द–सुन्दरी के आख्यान को आधार मानकर नाटककार ने 'लहरों के राजहंस' की रचना की है। यह नाटक ऐतिहासिक है परन्तु इसमें मोहन राकेश ने ऐतिहासिक आख्यान को वर्तमान संदर्भ में प्रस्तुत कर अपनी नवीन कल्पनाओं का समायोजन कर नाटक में नवीनता ला दी है।

प्रस्तुत नाटक 'लहरों के राजहंस' का कथानक कपिलवस्तु के राज परिवार से सम्बद्ध है। राजकुमार नंद द्वारा दीक्षा ग्रहण किए जाने की घटना का उल्लेख कर नाटककार ने तत्कालीन सामाजिक स्थिति का विस्तृत विवरण प्रस्तुत किया है। समाज में महात्मा बुद्ध के बढ़ते प्रभावों को बड़े ही सरल शब्दों में राकेश जी ने प्रस्तुत किया है। नाटककार की प्रमुख घटना है नन्द का दीक्षित होना। इसी घटना को मोहन राकेश जी ने तीन अंकों के इस नाटक में प्रभावपूर्ण ढंग से चित्रित किया है।

विश्लेषण –

'लहरों के राजहंस' नाटक का कथानक तीन अंकों में विभाजित है। नाटक के प्रथम अंक में कथा का उद्घाटन किया गया है। नाटक का यह अंक सुन्दरी के कक्ष से प्रारम्भ होता है। राजसेवक श्वेतांग और श्यामांग साज सज्जा में संलग्न दिखायी पड़ते हैं। अतिथियों की प्रतीक्षा है। कामोत्सव की तैयारी में श्वेतांग, श्यामांग, राजकर्मचारी और सुन्दरी की दासी अलका संलग्न है।

सुन्दरी – हाँ, रात के अन्तिम पहर तक। भोज, अपात्रक, नृत्य वर्षों तक याद बनी रहनी चाहिए, लोगों के मन में।[1]

राजकुमार नंद आखेट से वापस लौट आए हैं। वे अधिक थके प्रतीत हो रहे हैं। सुन्दरी उनके साथ आगन्तुकों की प्रतीक्षा करती है किन्तु मात्र एक अतिथि 'मैत्रेय' ही पधारते हैं और वे कहते हैं कि आज अन्य कोई अतिथि उत्सव में भाग लेने नहीं आयेगा क्योंकि जो व्यक्ति उन्हें मिले हैं उन सबने अपनी असमर्थता प्रकट की है जिन–जिन से मैं मिला हूँ, उनमें से हर एक ने किसी न किसी कारण अपनी असमर्थता प्रकट करते हुए क्षमा याचना की है–रविदत्त, अग्नि वर्मा, नील वर्मा, ईषाण, शैवाल सभी ने।[2]

राजकुमार नंद अव्यवस्थित परिस्थिति की अनुभूति करते हुए मैत्रेय जी से जानना चाहते हैं कि और पद्मकान्त रुद्रदेव, लोहिताक्ष, शालि मित्र?

मैत्रेय – लोहिताक्ष और शालि मित्र से मिलने नहीं गया पद्मकान्त और रुद्रदेव ने भी यही कहा कि उनकी ओर से मैं क्षमा याचना करूँ, वे आज नहीं आ पायेंगे। उनसे मिलने के बाद और किसी के यहां जाने का मन नहीं हुआ।[3]

यह सुनकर सुन्दरी के अन्तर्मन में गहरा आघात लगा और वह उद्विग्न हो जाती है। आर्य मैत्रेय के इस सुझाव से वह सहमत नहीं होता कि कामोत्सव स्थगित कर दिया जाये। आर्य मैत्रेय कुछ समय बाद जाने की आज्ञा मांगते हैं। नन्द उन्हें रोकना चाहते हैं किन्तु अपनी अव्यवस्थित मानसिक संवेदनात्मक स्थिति में अति उद्विग्न होकर कह देती है – 'आर्य मैत्रेय यदि जाना चाहते हैं तो इन्हें जाने दीजिए कह दीजिए कि जिनके यहां से होकर आए हैं. जाते हुए भी एक बार उनके यहां होते जायें। उन सबसे कह दें कि मेरे यहां आने के लिए किसी कल की प्रतीक्षा में वे न रहें। वह कल अब उनके लिए कभी नहीं आवेगा, कभी नहीं।[4]

यह कहकर सुन्दरी अपने कक्ष में चली जाती है। आर्य मैत्रेय भी चले जाते हैं। शशंक – व्यवस्था हो गयी है। ऐसी सूचना देता है और नन्द उसे आज्ञा देते हैं जो आसन बिछाया है उसे उठा दो। अब सब उनकी कोई आवश्यकता नहीं।[5] नन्द के इसी कथन के साथ 'लहरों के राजहंस' नाटक के प्रथम अंक की कथावस्तु यहीं समाप्त हो जाता है।

नाटक के दूसरे अंक का प्रारम्भ सुन्दरी के कक्ष से ही होता है। अन्धकार में टहलते हुए राजकुमार नंद की छायाकृति दिखायी पड़ती है। अनिन्द्रा से उद्विग्न नंद कक्ष में परिचालित हैं और नेपथ्य से श्यामांग का ज्वर–प्रलाप सुनायी देता है, ''कोई स्वर नहीं है, कोई किरण नहीं है, सब कुछ इस अंध कूप में डूब गया है। मुझे सुलझा लेने दो नहीं तो अपने हाथों का मैं क्या करूंगा। कोई उपाय नहीं.........कोई भाग .... नहीं ओढी जाती।''[6]

सुन्दरी गहरी निद्रा में निमग्न है। दिन भर की थकान और फिर गहरी निराशा ने सुन्दरी को किं कर्तव्य विमूढ़ की स्थिति में उपस्थित कर दिया है। राजकुमार नंद भी उद्विग्न लग रहे हैं श्यामांग के अनवरत प्रयास से उनकी उद्विग्नता और बढ़ती जा रही है।

राजकुमार नंद बुझते दीपकों को जलाने के लिए अलका से अग्निकाण्ठ मांगता है। अलका अग्निकाण्ड लेकर दीपक जलाना चाहता है किन्तु नन्द उसके हाथ से अग्निकाण्ठ मांगता है और अपने हाथ से दीपक जलाने लगता है। इतने में सुन्दरी जग जाती है। वह नन्द से पूंछती है, ये दीपक रात भर जलते रहें बुझे नहीं?

नंद – बुझ गए थे। मैंने अभी जलाये हैं।
सुन्दरी – आपने जलाए हैं? क्यों दास दासियां?
नंद – मैं नहीं चाहता था कि दास दासियों में से कोई आकर तुम्हारी नींद में बाधा डाले।

यह जानकर कि नंद रात भर सो नहीं सके सुन्दरी को दुःख होता है। वह रात के व्यवहार के लिए खेद प्रगट करती है। वह अलका को बुलाती है ताकि वह प्रसाधन कर सके किन्तु अलका की अनुपस्थिति में निहारिका वहां आती है और कहती है कि अलका कविराज के कक्ष में गयी है।

सुन्दरी, अलका की अनुपस्थिति में नंद से श्रृंगार प्रसाधन में सहयोग की चर्चा करती है। नंद दर्पण उठाकर श्रृंगार में सहयोगार्थ तत्पर होता है। इसी समय नेपथ्य में धम्मं शरणं गच्छामि के समवेत स्वर उसके कान में पड़ते हैं और अन्मनस्थता के कारण नंद के हाथ से दर्पण हिल जाता है। प्रयत्नतः वह पुनः दर्पण को स्थायित्व देता है किन्तु इस बार दर्पण उसके उद्वेलित स्वासों से धूमिल हो जाता है। सुन्दरी विशेषक बनाने से साफ इन्कार करती है। नन्द उसे मनाकर पुनश्च दर्पण उठाता है। अभी सुन्दरी माथे पर उंगुली से विशेषक बनाना ही चाहती है कि पुनः नन्द के कानों में भिक्षुओं का समवेत गान धम्मं शरणं गच्छामि गूंज उठता है। वह अव्यवस्थित होता है और उसके हाथ से दर्पण गिरकर टूट जाता है। इतने में अलका से गौतम के घर आकर लौट जाने की बात सुनकर नन्द गौतम के पास जाता है। जाते समय वह सुन्दरी के माथे पर एक चन्दन बिन्दु लगाता है और लौटकर पूर्ण विशेषक बनाने की बात कहता है। सुन्दरी की सहमति पाकर वह विशेषक बनाना ही चाहता है कि हवा से किवाड़ खुल जाता है। नंद को आशंका होती है, वह पुनः आश्वस्त होकर विशेषक बनाने का उपक्रम करता है कि तभी दासी अलका आकर सूचना देती है कि भवन के द्वार पर गौतम बुद्ध भिक्षा हेतु आए हैं।

अलका, सुन्दरी से कहती है हाँ देवि! अभी–अभी मैं बाहर से आ रही हूँ तो देखा ..... देखा कि आंगन के द्वार पर एक भिक्षा मूर्ति भिक्षा लेने के लिए खड़ी देखा है। ..... दो बार उसने भिक्षा की याचना की, फिर सहसा लौट पड़ी। ..... तभीं मैंने उसे आलोक में देखा। ....देखा कि वे स्वयं ..... स्वयं गौतम बुद्ध हैं। मैं उसी समय ...... सूचना देने के लिए.......यहां चली आयी।[7]

नन्द कुछ सोचने लगते हैं। सुन्दरी की ओर देखकर तुम्हें यह नहीं लगता कि मुझे जाकर एक बार उनसे इस प्रमाद के लिए क्षमा–याचना करनी चाहिए। ....

सुन्दरी – ऐसा सोचते हैं तो एक बार चले क्यों नहीं जाते।
नंद – सोचता हूँ जाना हो तो.......।
सुन्दरी – इसी समय जाना चाहिए, यही न? तो जाइए न। मुझे दिए हुए वचन के कारण विवशता का अनुभव करते हैं? वह विवशता नहीं रहेगी।[8]

नंद सुन्दरी से गौतम बुद्ध से क्षमा याचना करने के लिए जब कहता है तब सुन्दरी उसे लौटकर आने पर शेष विशेषक को पूरा करने के लिए कहती है। नन्द के जाने पर नेपथ्य से श्यामांग इस संवाद से यह अंक समाप्त हो जाता है पानी पानी नहीं है अंधेरा लहरों में पानी नहीं है......एक किरण ......कोई एक किरण ला दो यह घना गुमसुम अंधेरा यह अंधेरा मुझसे नहीं सहा जाता यह छाया यह छाया मुझसे नहीं ओढ़ी जाती..... यह छाया मेरे ऊपर से हटा दो .... एक किरण ... कोई एक किरण।[9]

तीसरे अंक की कथावस्तु में नंद के प्रति सुन्दरी की आकुलता प्रतीक्षा करने के पश्चात् सुप्त अवस्था में प्रतिभासित करायी गयी है। नंद सिर मुड़ाए भिक्षुवेश में स्वयं को दर्पण में देखकर बुद्ध के प्रति आक्रोश प्रकट करता है।

नंद – तथागत के आदेश के विषय में अब और नहीं सुनना चाहता। तथागत के आदेश से तुमने मेरे केश काट दिए। बड़े भाई के सम्मान के कारण मैं उन क्षणों के लिए विमूढ़ सा हो रहा, बलपूर्वक विरोध नहीं कर सका परन्तु उसके बाद मैं अपना उत्तर उन्हें दे आया था।[10]

नंद भिक्षु के वेश में सुन्दरी के सूखे हुए विशेषक को गीला करने के लिए जैसे ही सुन्दरी के माथे पर बिन्दु बनाने लगता है कि उसकी मुंडित आकृति को देखकर वह चीख उठती है। अन्त में नेपथ्य में वही सुनायी देता है बस एक किरण केवल एक किरण।[11] नेपथ्य का स्वर और मंच की आकृति दोनों साथ–साथ विलीन हो जाते हैं।

'लहरों के राजहंस' नाटक की कथावस्तु पर जब हम दृष्टि डालते हैं तो हम देखते हैं कि इसमें किसी प्रकार क्रमबद्धहीनता नहीं है। पहले अंक की कथा दूसरे अंक से होकर तीसरे अंक पर समाप्त होती है।

सभी प्रमुख और गौण पात्रों का प्रस्तुतीकरण अत्यन्त कुशलता और क्षिप्रता के साथ हुआ है। नाटक कथावस्तु के तीन संचरणों कथा का उद्घाटन, विकास तथा चरमोत्कर्ष अधिक सफलतापूर्वक दिखायी देते हैं। 'लहरों के राजहंस' नाटक के कथानक या कथावस्तु से सम्बन्धित नाटक की सफलता इसके कथ्य मानसिक द्वन्द्वात्मक स्थिति का अपेक्षित प्रकाशन से और अधिक दिखायी देती है। सभी घटनाओं का केवल एक स्थल पर प्रस्तुत करना नाटककार और नाटक की कथावस्तु विधान की बहुत बड़ी सफलता है।

इस नाटक में कपिलवस्तु के प्रायः सभी लोग गौतम बुद्ध के उपदेशों से प्रभावित हुए जा रहे थे, अधिक तीव्रता से उधर आकर्षित होकर अपनी गम्भीर भावनाओं को समर्पित करते जा रहे थे। बुद्ध के इस व्यापक प्रभाव को मोहन राकेश ने स्पष्ट रूप और व्यापक परिवेश के साथ उभारने का प्रयास किया है। सुन्दरी अलका आदि के द्वन्द्वात्मक और अस्थिर भाव व्यापार इसी के सही प्रतीक स्वरूप हैं। आर्य मैत्रेय महात्मा बुद्ध से प्रभावित थे, वह धीरे–धीरे सांसारिक आडम्बरों से हट रहे थे। कामोत्सव में एक मित्र के नाते सम्मिलित होने के लिए अवश्य गए थे किन्तु वहां अधिक रुक न सके क्योंकि वे रागरंग से ऊब चुके थे। उनका अन्तिम लक्ष्य बौद्ध धर्म की दीक्षा लेना था।

कथावस्तु के परिप्रेक्ष्य में नाटककार ने 'लहरों के राजहंस' नाटक में ऐतिहासिक काल का यथार्थ चित्रण किया है। डॉ. सुरेश अवस्थी के शब्दों में 'लहरों के राजहंस' में एक ऐसे कथानक का नाटकीय पुनराख्यान है जिसमें सामाजिक सुखों और आध्यात्मिक शान्ति के पारस्परिक विरोध तथा उनके बीच खड़े हुए व्यक्ति के द्वारा निर्णय लेने का अनिवार्य द्वन्द्व निहित है। इस द्वन्द्व का एक दूसरा पक्ष स्त्री और पुरुष के पारस्परिक सम्बन्धों का अन्तर्विरोध है।[12]

'लहरों के राजहंस' नाटक की कथावस्तु आधुनिक नाट्यशिल्प के अनुरूप इतिहास और साहित्य से सम्पृक्त संवेदनात्मक भावबोध के धरातल पर रचनात्मक स्तर को महत्वपूर्ण बनाता है।

प्रस्तुत नाटक 'लहरों के राजहंस' की कथावस्तु संस्कृत के महाकवि अश्वघोष के काव्य पर आधारित है। सौंदर, नंद की तरह राजकुमार नंद और उसकी राजरानी रूपवती :सुंदरी' के आंतरिक द्वन्द्व और संघर्ष को नाटककार ने प्रस्तुत किया है। मोहन राकेश ने इस नाटक में राजकुमार नंद और सुंदरी के माध्यम से आधुनिक युग के व्यक्ति के द्वन्द्व और संघर्ष को चित्रित किया है।

नाटक के प्रथम अंक में अन्तर्द्वन्द्व का आभास नहीं होता किन्तु नाटककार ने नाटक के अन्तर्द्वन्द्व के बीज का रोपण अवश्य कर देता है जो आगे चलकर दूसरे अंक में अपने स्वभाव रूप में प्रकट होता है। अभिप्राय यह है कि दूसरे अंक में अन्तर्द्वन्द्व का हल्का सा रूप प्रतिभासित होने लगता है। 'लहरों के राजहंस' नाटक के तीसरे अंक में द्वन्द्व और संघर्ष का रूप पूर्णरूपेण उभरकर प्रत्यक्ष रूप से चरम बिन्दु तक पहुंच जाता है। एक ओर जहां सुन्दरी अपने विशेषक श्रृंगार के लिए अपने पति की बात जोहती है वहीं दूसरी और राजकुमार नंद स्वयं अपना पथ ढूढ़ने के लिए चला जाता है।

द्वन्द्व व संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में नाटक का यह अंत आरोपित है। पति–पत्नी परस्पर एक–दूसरे को नहीं समझ पाते जिसका यह भयानक परिणाम होता है। नंद की अनचाही शिक्षा–दीक्षा की दिशा भी सम्यक रूप से प्रसप्त नहीं हो पाती। 'लहरों के राजहंस' नाटक में द्वन्द्व और संघर्ष के कई स्थल भी निर्मित हुए हैं। आहत राजहंस, क्लान्ति से मृत, मृग, व्याघ्र से आत्मरक्षा में आहत राजकुमार नंद, सूखा हुआ विशेषक, टूटा हुआ दर्पण तथा नाटक में श्यामांग और सुंदरी की विक्षिप्तता नंद के अंतः संघर्ष को ही प्रस्तुत करती है।

राजहंस नंद, सुंदरी के समांतर है। लहरें उनकी परिस्थितियां। मृग का प्रकरण एक संकेत प्रस्तुत करता है। जीवित रहने के लिए संघर्षरत मृग का अपनी ही वेदना से मरने की परिणति मृग की ही वही किसी की भी हो सकती है? नंद भी इससे आशंकित हैं। सुंदरी नंद से वास्तव में बहुत प्रेम करती है, पर इस प्रेम में गहरा आत्मविश्वास भी है जिसका पोषण सुंदरी की जीवन दर्शन से होता है। नाटक का मूल द्वन्द्व और संघर्ष पार्थिव

और अपार्थिव मूल्यों का अन्तर्द्वन्द्व है। सुन्दरी पृथ्वी के प्रतीक में और उसकी चेतना को अपने तक बांधे रखना चाहती है। पुरुष बंधना, चाहकर भी उससे ऊपर उठना एक अपार्थिव जिज्ञासा में अपने लिए उपलब्धता ढूंढ़ना चाहता है। बुद्ध पार्थिवता को तिलांजलि देकर उस उपलब्धि की ओर जाते हैं। नंद तिलांजलि नहीं दे पाता, नहीं देना चाहता। उसकी खोज है पार्थिवता के अंदर से अपार्थिव को पाने की। इसलिए वह संशयग्रस्थ हैं एक प्रश्न चिन्ह है।[13]

राजकुमार नंद का अपने ऐतिहासिक परिवेश में केश मुड़ना, व्याघ्र से युद्ध करना, घर लौट आना और सुंदरी से बिना कुछ कहे चले आना, उसके आंतरिक जीवन और बाह्य जीवन के अन्तर्द्वन्द्व को प्रस्तुत करता है। राजकुमार नंद के साथ जब उसका सिर मुंडित हो जाता है और महात्मा बुद्ध के प्रभाव को द्योतित करता है तब उनके साथ भिक्ष आनंद सुंदरी के कक्ष में प्रवेश करते हैं, जहां दोनों राजनगर के समग्र शिल्पों का अवलोकन करते हैं। राजहंसों का ताल से उड़ जाना यह सुंदरी के अंतरूपरिवेश को द्योतक करता है कि अब राजकुमार नंद सुंदरी के पास लौटकर नहीं आवेगा।

'लहरों के राजहंस' की रचना में जितना योगदान रंगकर्मी लेखक मोहन राकेश का रहा है उतना ही अन्य नाट्य पात्रों के चारित्रिक विधान का भी अस्तित्व प्रतीत होता है। प्रस्तुत नाटक अपने ऐतिहासिक कलेवर में आधुनिक युग के व्यक्ति के मानसिक संघर्ष द्वन्द्व और अंतर्द्वन्द्व को व्यक्त करता है।

आंकलन के परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता है कि 'लहरों के राजहंस' नाटक की वस्तु योजना ऐतिहासिक होते हुए भी आधुनिक संदर्भों को बड़ी गहराई के साथ अन्तराल में संजोये हुए हैं। नव प्रयोगों की दृष्टि से यह नाटक वस्तु जगत के वर्तमान संदर्भों में सफल कहा जायेगा।

निष्कर्ष –

निष्कर्षतः 'लहरों के राजहंस' मोहन राकेश द्वारा रचित एक दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक और संवेदनात्मक गहराई से भरा हुआ नाटक है, जो परंपरागत दृष्टिकोण से हटकर गौतम बुद्ध की कहानी को यशोधरा के दृष्टिकोण से प्रस्तुत करता है। यह नाटक इतिहास की घटनाओं के पीछे छिपी मानव संवेदना, आत्मसंघर्ष, और स्त्री–पुरुष के संबंधों में मौन की भूमिका को उजागर करता है। आज के युग में जब स्त्री अस्मिता, समता, और संपूर्ण सहभागिता की माँग कर रही है, 'लहरों के राजहंस' इस विमर्श में अत्यंत प्रासंगिक बन जाता है। यह नाटक यह सिखाता है कि त्याग को आदर्श मानने से पहले यह समझना जरूरी है कि उसमें कितनी पीड़ा, अकेलापन और अपूर्णता छिपी है। इस प्रकार 'लहरों के राजहंस' एक ऐसा नाटक है जो बुद्ध की गाथा को यशोधरा के मौन आँसुओं और संघर्ष से जोड़कर मनुष्य की भावनात्मक सच्चाइयों को उद्घाटित करता है। यह केवल इतिहास नहीं, बल्कि आत्मा की आवाज है। मोहन राकेश ने इस नाटक के माध्यम से हिन्दी नाटक को केवल मंचीय कला नहीं, बल्कि आत्मचिंतन की प्रक्रिया बना दिया है।

संदर्भ –

1 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, पृष्ठ 31
2 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–एक, पृष्ठ 58
3 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–एक, पृष्ठ 58
4 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–एक, पृष्ठ 62
5 मोहन राकेश – लहरों के राजहस, अंक एक, पृष्ठ 63
6 मोहन राकेश – लहरों के राजहस, अंक एक, पृष्ठ 64
7 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–दो, पृष्ठ 89
8 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–दो, पृष्ठ 90–91
9 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–दो, पृष्ठ 93
10 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–तीन, पृष्ठ 109
11 मोहन राकेश – लहरों के राजहंस, अंक–तीन, पृष्ठ 126
12 डॉ. सुरेश अवस्थी – लहरों के राजहंस, भूमिका, पृष्ठ 7
13 मोहन राकेश. – लहरों के राजहंस, पृष्ठ 23